

UGC Care Journal

ISSN : 0974-0053

सम्पादक

यशदेव शल्य - मुकुंद लाठ

संपादक

अंबिकादत्त शर्मा

दर्शन प्रतिष्ठान

जयपुर

उन्मीलन

(A Multidisciplinary Refereed Research Journal)

Vol. 27, Issue-07
(October, 2020)



परामर्शदाता

1. गोविन्दचन्द्र पांडे, द्वारा श्री वी.के. पाण्डे, ए-90 अन्नकापुरी, पोस्ट आफिस भेल, भोपाल-462024
2. दयाकृष्ण, चौथी मंजिल, एच.डी.एफ.सी. एन्क्लेव, अशोक मार्ग, सी-स्कीम, जयपुर-302001
3. रमेशचन्द्र शाह, एम-4, निराला नगर भदभदा रोड, भोपाल-462003
4. अशोक वाजपेयी, सी-60, अनुपम को-आपरेटिव ग्रुप हाउसिंग, सोसायटी, वसुन्धरा एन्क्लेव, दिल्ली-96

संपादक

1. यशदेव शल्य, पी-51, मधुवन पश्चिम किसान मार्ग, जयपुर-302015
2. मुकुन्द लाठ, ए 37/38, विश्वामित्र मार्ग, श्याम नगर, अजमेर रोड, जयपुर
3. अम्बिकादत्त शर्मा, बी.डी.एस. 2 गौर नगर, विश्वविद्यालय परिसर सागर

संपादकीय संयर्क

यशदेव शल्य एवं मुकुन्द लाठ द्वारा दर्शन प्रतिष्ठान, पी-51 मधुवन पश्चिम, किसान मार्ग जयपुर-302015 के लिए विशाल कम्प्यूटर्स जयपुर से लेकर कम्पोजिंग तथा श्रीजी प्रिण्टर्स, नगदी इमली वाराणसी द्वारा मुद्रित

- मिति चित्रकला में प्रयुक्त चित्रण माध्यमों का विश्लेषणात्मक अध्ययन 78-87
रुचि मलिक
- समकालीन कविता और सुदामा पाण्डेय 'धूमिल' का काव्य 88-94
डॉ० शिव प्रताप सिंह
- सूरदास का भक्ति-मार्ग और भारतीय समाज 95-100
डॉ० अवधेश कुमार
- हिंदी आलोचना में डॉ० नामवर सिंह का योगदान 101-104
कु० उनेशा

सूरदास का भक्ति-मार्ग और भारतीय समाज

डॉ. अवधेश कुमार

रक्षाएक प्रध्यापक (अतिरिक्त) हिन्दी विभाग, डॉक्टर हरीशंह गौर केन्द्रीय विश्वविद्यालय, समार-470003 (पंजाब प्रदेश)

सारांश —

सूरदास का आदिमाव भारतीय संस्कृति का सक्रान्तिकाल है। कबीर की भाँति सूरदास भी भुति शास्त्र एवं लोक मर्मज्ञ थे। इन्होंने रचय कुछ भी नहीं लिखा, बल्कि इनके काव्य-पदा को उनकी भाषा के मर्मज्ञ सहयोगियों, भक्तों और शिष्यों ने लिपिबद्ध एवं संग्रहीत किया। बल्लभाचार्य ने सूरदास को गरुडाट में 'पुष्टिमार्ग' की गुरु-दीक्षा देकर 'श्रीमदभागवतपुराण' के दशम स्कन्ध की अनुक्रमणिका सुनायी तथा मथुरा में गोतर्धन पर बने श्रीनाथजी के मन्दिर में कीर्तन सेवा के लिए अवसर मिल गया। पुष्टिमार्ग में दीक्षित होकर सूरदास को काव्य, संगीत, तथा विविध कलाओं का सम्मान वातावरण सहज ही प्राप्त हो गया। इस कारण सूरदास की भक्ति-साधना की पद्धति में परिवर्तन हुआ। इस वैचारिक परिवर्तन के बाद सूरदास भारतीय संस्कृति और परम्परा के आध्यात्मिक राह से भारतीय जनमानस और समाज को भक्तिकाव्य के माध्यम जीने की नई राह दिखायी।

मुख्य बिन्दु— भक्तिमार्ग, भक्तिकाव्य, जीवन दर्शन और भारतीय समाज।

प्रस्तावना —

भक्तिकाल के प्रबल और प्रतिकूल वातावरण के तूफान में भक्ति और ज्ञान का द्वीप प्रज्ज्वलित रखने का कार्य आचार्यों, संतों, भक्तों और कवियों ने किया। भक्त सूरदास को भी ऐसे ही एक महान गुरु बल्लभाचार्य का सम्पर्क और मार्गदर्शन मिला, जिनके प्रसाद से वे अपने युग के भक्त कवि और समाज चिंतक तीनों रूपों में सुशोभित हुए। इनका समाजदर्शन आख्यानक प्रसंगों के माध्यम से व्यक्त हुआ है और इनके भक्तिमार्ग की अभिव्यक्ति का ढंग अन्य कवियों से अनूठा रहा है।

भक्तकवि सूरदास के संदर्भ में डॉ. नलिन विलोचन शर्मा कहते हैं कि, "कृष्ण-भक्ति को हृदय की वस्तु बनाए रखने में सूरदास का बहुत हाथ है। सूरदास ने भक्ति को उसके अनुरूप कवित्व और संगीत से भावपूर्ण और मधुर बनाकर, न केवल सरल और आकर्षक आध्यात्मिक साधन ही बनाया, प्रत्युत उसे साहित्य का मनोरम स्वरूप भी दिया।" आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का अभिमत है कि, "सूरदास जी अपने भाव में मग्न रहने वाले थे, अपने चारों ओर की परिस्थिति की आलोचना करने वाले नहीं। संसार में क्या हो रहा है, लोक की प्रवृत्ति क्या है, समाज किस ओर जा रहा है इन बातों की ओर उन्होंने अधिक ध्यान नहीं दिया।" इस विचार से असहमति प्रकट करते हुए डॉ. बलराम तिवारी का अभिमत है कि, "कबीर घाव पर सीधे नश्टर लगाते हैं और चीर-फाड़कर रख देते हैं। सूर पके घाव में सूई चुभाते हैं और मवाद बहा देते हैं। छुआ-छूत, वर्ग-भेद आदि पर कबीर की लाठी-मार शैली सूर के लिए निरर्थक है। सूर की शैली हास-परिहास के कथात्मक सन्दर्भ द्वारा अनुभूति और संवेदना की घूँटी पिलाकर रोग का उपचार करने की है।"²

प्रो. मैनेजर पाण्डेय लिखते हैं कि, "सूरदास न कबीर की तरह समाज-सुधारक हैं और तुलसी की तरह उपदेशक। उनके काव्य में कबीर के समान उस समय के समाज की कड़ी आलोचना नहीं है और न, तुलसी के समान समाज की व्यवस्था तथा मर्यादा की रक्षा का आग्रह। वे प्रेम और सौन्दर्य के अनंत अनुभवों के अनुपम शब्द-शिल्पी हैं।" निश्चित रूप से सूरदास का रचनात्मक कंनवास बहुत है। इसी कारण इनको भक्तिकाव्य का श्रेष्ठ प्रगीतकार माना जाता है। सूरदास के काव्य में ज्ञान और भक्ति, सगुण और निर्गुण, रागानुगामी जीवन और विधि निषेधवादी जीवन दृष्टि, जनसंस्कृति और सामंती संस्कृति, गाँव की संस्कृति और नगरीय संस्कृति के द्वन्द्व में उस युग के व्यापक बौद्धिक-सांस्कृतिक द्वन्द्वों की अनुपम अभिव्यक्ति हुई है। उनकी कविता में भक्तिकाल की समन्वित कलाचेतना की अभिव्यंजना भी है। इनके भक्ति काव्य में उस युग के सामाजिक जीवन के यथार्थ और विचारधारात्मक संघर्ष की कलात्मक अभिव्यक्ति के साथ समाज का यथार्थ इतिहास उपस्थित है।

गदि हम सूरदास की कृतियों की बात करें तो इनके ग्रंथों में 'सूरसागर' सूर सारावली और साहित्य लाहरी विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। 'सूरसागर' प्रामाणिक ग्रंथ है, जिसका आख्यान 'श्रीमद्भागवतपुराण' है। 'सूरसागर' को बारह स्कन्धों में विभक्त किया गया है और प्रत्येक स्कन्ध हरि हरि हरि हरि सुभिरन करिए। हरि गरनार बिद उर धरिए।।" से प्रारम्भ होता है। इनमें कृष्ण विनय भक्ति विष्णु के अवतारी तथा अन्य पौराणिक कथाओं का निरूपण है।

सूरदास का आविर्भाव भारतीय संस्कृति का सन्निकाल है। कबीर की भाँति सूरदास भी भुक्ति शारत्र एव लोक मगंज थे। इन्होंने स्वयं कुछ भी नहीं लिखा, बल्कि इनके काव्य-पदों को उनकी भाषा के मगंज सहयोगियों, भक्तों और शिष्यों ने लिपिबद्ध एव संग्रहीत किया। बल्लभाचार्य ने सूरदास को गरुडघाट में 'पुष्टिमार्ग' की गुरु-दीक्षा देकर 'श्रीमद्भागवतपुराण' के दशम स्कन्ध की अनुक्रमणिका सुनायी तथा मथुरा में गोवर्धन पर बने श्रीनाथजी के मन्दिर में कीर्तन सेवा के लिए अवसर मिल गया। पुष्टिमार्ग में दीक्षित होकर सूरदास को काव्य, रागीत, तथा विविध कलाओं का सम्पन्न वातावरण सहज ही प्राप्त हो गया। इस कारण सूरदास की भक्ति-साधना की पद्धति में परिवर्तन हुआ। इस वैचारिक परिवर्तन के बाद सूरदास भारतीय संस्कृति और परम्परा के आध्यात्मिक राह से भारतीय जनमानस और समाज को भक्तिकाव्य के माध्यम जीने की नई राह दिखायी।

सूरदास के हृदय में कृष्ण के प्रति बेहद अनुराग होने के कारण सारारिकता से विरक्ति की भावना उत्पन्न हो गयी और घर छोड़कर ईश्वर की तरफ उन्मुख हो गये।

"मन रे, माधव सों करि प्रीति।

काम-क्रोध-मद-लोभ तू, छँडि सबै विपरीति।

भौरा भोगी बन भ्रमै, रे मोर न मानै ताप।

सब कुसुमनि मिलि रस करै, पै कमल बँधावै आप।।"

सूरदास ज्ञान के महत्त्व में गुरु को ही सर्वोपरि मानते हैं। गुरु महिमा के बारे में उनका मानना है कि इस जगत में बिना गुरु के हमारा जीवन अधकारमय ही रहेगा। गुरु कृपा से ही भक्त का मानसलोक आलोकित होता है। सूरदास का मत है कि गुरु भक्तिपथ में भक्त का मार्गदर्शन कर, उसे ज्ञान ज्योति से उदीप्त करता है। जैसे—

"गुरु बिनु ऐसी कौन करै ?

माला तिलक मनोहर बाना, लै सिर छत्र धरै।

भवसागर तै बूझत राखे, दीपक हाथ धरै।

सूर स्याम गुरु ऐसो समरथ, छिन मैं लै उधरै।।"

और इस तरह वे सासारिक बन्धनों में बँधे प्राणियों को सचेत करते हुए शारीरिक, मानसिक सामाजिक और मनोवैज्ञानिक स्थिति का बोध जागृत करने का प्रयास किया है।

सूरदास पुष्टिमार्गी साधना के सौम्य, सरल और सहज साधक हैं। वे तन्मय होकर कृष्णलीला का वर्णन करते हैं और इनके हृदय में भक्ति की जो लहरें उठती थी, उन्हें वह अपने कीर्तन-गायन शैली में गाते हुए प्रभु भक्ति में रसमग्न हो जाते थे। सूरदास की दृष्टि में ईश्वर ही जीवों के एक मात्र पालनकर्ता हैं, उसे इस सृष्टि में अपौरुषेय रूप में विद्यमान है। ईश्वर की महत्ता को सूरदास इस प्रकार प्रतिपादित करते हुए कहते हैं कि—

"नर देही पाई चित धरन कमल दीजै।

दीनबचन, सतति सग दरस परस कीजै।

गद गद सुर, पुलक रोम अंग प्रेम भीजै।

सूरदास गिरिधर जस गाइ गाई जीजै।।"

सूरदास ने प्रेम और विरह के द्वारा रागुण मार्ग में कृष्ण को साध्य माना है। उनके कृष्ण सखा-रूप में भी सर्वशक्तिमान परमेश्वर हैं। विष्णु, हरि, राम आदि सब कृष्ण के ही नाम हैं और इनमें भेदबुद्धि सूरदास को अभीष्ट नहीं है। सूरदास राव्ये प्रेममार्ग के त्याग और पवित्रता का ज्ञानमार्ग के त्याग और पवित्रता के समकक्ष रखने में खूब समर्थ हुए हैं। साथ ही उन्होंने उस त्याग को रागात्मिका-वृत्ति द्वारा प्रेरित करके मध्यकाल के समाज को भक्तिकाव्य के माध्यम से ज्ञान का सहज मार्ग भी दिखाया है। इनके भक्तिकाव्य का यह मार्ग बल्लभाचार्य द्वारा प्रतिपादित कृष्णभक्ति के स्वरूप की प्रतिष्ठा से हुई। इसी कारण इनकी भक्ति में अतःकरण की प्रेरणा तथा

अंतर की अनुभूति की प्रधानता है। दास्य भाव की भक्ति में सूर ने कृष्ण, राम और हरि को एक ही मानकर स्मरण किया है। जैसे निगुण ब्रह्म के इन सगुण नामों में कृष्ण नाम के प्रति उनका विशेष अनुराग छिपता नहीं है। लेकिन वात्सल्य, सख्य एवं कांत भाव की भक्ति में उनकी वैष्णव-भावना ऐकांतिक रूप से कृष्ण-प्रेम में केन्द्रित हो जाती है।

भक्ति का दूसरा चरण बल्लभाचार्य की गुरु दीक्षा से आरम्भ होता है, जिसका रूप सख्य भाव का है, जिसमें कृष्णलीला गान सर्वोपरि है। सूरदास ने भगवान कृष्ण के जीवन के बाल समय का विस्तृत वर्णन अपने काव्य में किया है। जहाँ भगवान कृष्ण, शक्ति के प्रतीक होते हुए भी सूरदास के कृष्ण, शक्ति के साथ-साथ प्रेम और माधुर्य की मूर्ति है। इसी का परिणाम है कि सूरदास ने श्रीमद्भागवत पुराण की कथा को गेय पदों में रचा। इनकी दास्य भाव की भक्ति को इन पदों में देखा जा सकता है-

“अखियों हरि दरसन को भूखी।

कैसे रहै रूपरसराची ये बतियाँ सुनि रूखी।।”⁷

सूरदास राधाकृष्ण की मनोहर छवि को अनेक रूपों तथा रंगों में देखते हैं तथा इस अनुपम छवि का वर्णन अथक रूप से करते हैं। इनके काव्य पदों से यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि उनके भक्ति रस एवं रसिन्ध निर्मल हृदय में नटवरलाल की छवि दिखायी देती है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल कहते हैं कि “यद्यपि तुलसी के समान सूर का काव्य-क्षेत्र इतना व्यापक नहीं कि उसमें जीवन की भिन्न-भिन्न दशाओं का समावेश हो, पर जिस परिमित पुण्यभूमि में उनकी वाणी ने संचरण किया उसका कोई कोना अधूता न छूटा। शृंगार और वात्सल्य के क्षेत्र में जहाँ तक इनकी दृष्टि पहुँची वही तक और किसी कवि की नहीं।”⁸

सूरदास ने ‘सूरसागर’ के ‘भ्रमरगीत’ अंश में गोपियों का मनोहारी और मर्मस्पर्शी चित्रण किया है। हिन्दी साहित्य में इतना सुन्दर उपालम्भ काव्य कहीं और नहीं मिलता। उद्धव तो अपने निगुण ब्रह्मज्ञान और योगकथा के द्वारा गोपियों को प्रेम से विरत् रखना चाहते हैं, लेकिन गोपियों उनसे भी कहीं ज्यादा ज्ञानी हैं। गोपियों उद्धव को अपनी विवशता के अनेक कारण बताते हुए हमेशा जिरह करती हैं कि-

“ऊधौ! तुम अपना जतन करी।

हित की कहत कुहित की लागै, किन बेकाज ररौ ?

जाय करौ उपचार आपनौ, हम जो कहति हैं जी की।

कछू कहत कछवै कहि डारत, धुन देखियत नहिं नीकी।।”⁹

इस तरह सूरदास ने भक्ति में शुद्ध-भाव को ही अधिक महत्व दिया है। इनके सगुण ब्रह्म कृष्ण रस-रूप हैं। यह स्वाभाविक भी था, क्योंकि पुष्टि भक्ति में योग, ज्ञान आदि साधन गौण हैं। निगुण ब्रह्म को भलि-भौंति जान लेने के बाद ही सूरदास जी उसके सगुण रूप को आधार बनाकर अपने साहित्य सृजन करते हैं।

सूरदास की भक्ति पद्धति का मेरुदण्ड ‘पुष्टिमार्ग’ है, जिसमें आराध्यदेव रसरूप, सगुण श्रीकृष्ण हैं और यह बल्लभाचार्य के ‘शुद्धाद्वैतवाद’ के सिद्धान्तों पर टिका है। ‘पुष्टिमार्गी’ भक्त अपने को पूर्णतः भगवान पर छोड़ देता है। विरहिणी गोपियों की स्थिति भी ऐसी ही है। उन्हें अपने अनन्य प्रेम पर विश्वास है। संसार के समस्त साधनों का त्यागकर वे एकमात्र प्रेम के बल पर भगवान को वश में करती हैं। यही पुष्टि-भक्ति की सार्थकता है। कृष्ण का परब्रह्मत्व उनका विरुद्धधर्मत्व तथा जीव और जगत् का अंशरूपत्व भी सूर को मान्य है, जिसकी स्वीकृति ‘सूरसागर’ के दशम स्कन्ध के प्रारम्भ में दिखाई देती है-

“आदि सनातन, हरि अविनाशी। सदा निरन्तर घट-घट बासी।

पूरन ब्रह्म, पुरान बखानै। चतुरानन, सिव, अनन्त न जानै।

गुन-गन अगम, निगम, नहिं पावै। ताहि जसोदा गोद खिलावै।।”¹⁰

उपर्युक्त पद में सूरदास ने कृष्ण को ‘सनातन’, ‘अविनाशी’, ‘पूरन ब्रह्म’ कहकर उनका ‘निगुणत्व’ प्रकट किया गया है। साथ ही ‘ताहि जसोदा गोद खिलावै’ कहकर उनका ‘सगुणत्व’ भी सूचित किया गया है। इस प्रकार सूरदास की भक्ति पद्धति में विरोधी धर्मों की स्थिति स्वीकार की गई है।

सूरदास की कर्मकाण्ड निरसना के सम्बन्ध में प्रो. वित्थल-चन्द्र सनतल्लू का कहना है कि, 'कबीर व कबिराज की स्वाध्यायी तन्त्रा को संस्थापन का बीजा उदाया था। सूरदास सौंदर्य के प्रति प्रान्ति स्थान स्थान पर सूर ने विगर्हणा की है।' सूरदास ने निरन्तर प्रेम की स्थापना वहीं की जहाँ प्रादि विधानों को सूर ने धारण नहीं किया। निरञ्जन का ध्यान करके अलख जगता भी इनकी प्रेम स्थापना में न था। उदाव-गापी सवाद में गापियों के द्वारा योग को खण्डित करके इस बात को स्पष्ट रूप में व्यक्त किया गया है कि सूर के प्रेम-दर्शन में नाथपंथियों का निर्गुण पथ की बाधकियी भी नहीं है। मसालन, इंगला-पिंगला और पटदल कमल के चक्र में दूर कर्मकाण्ड की निरसना पर जोर देते हुए सूर कहते हैं कि-

यह उपदेश कही है भाग्य करि विचार सम्मुख है साध्य।
इंगला पिंगला सुगमनी नारी, सुन्य महल में बसाहि मुरशि।
ब्रह्म भाव करि मैं सब देख्यो, अलख निरञ्जन की को लेख्यो।
याहि प्रकार विषय तम तरिण्य योग पथ क्रम अनुसरिय॥^{११}

इसी प्रकार सूरदास के समय भारतीय समाज में व्रत, पुजा, उपवास, तीर्थ आदि की महिमा खूब प्रतिष्ठित थी। सूर इन चीजों को व्यर्थ समझते थे कि 'गनिका किये कौन व्रत समय शुक्र बित नाम पढ़ावै। मनसा करि सुमिरौ गज बपुरो प्राह परम गति पावै।' इस बात में निर्गुण ज्ञानमनियों से प्रभावित जान पड़ते हैं। इसी प्रकार योग, यज्ञ आदि अनुष्ठान भी उन्हें परान्द नहीं है-

'काह को अश्वमेध जग कीजे गया-ब्राह्म कारी कंदार।
राम कृष्ण अभिघाम न पटतर जा तन गरे हममार॥
प्राग कल्य माथे करवत दै, चन्दा तरिन ग्रहन लछवार।
सूरदास भगवन्त भजन विनु, यम के दूत कौन टारै मार॥'^{१२}

उपरोक्त पद के अनुसार यह मतलब नहीं कि सूरदास समाज पथ के विरोधी थे। वास्तव में सूरदास ईश्वर के प्रति अतःकरण की सगात्मक भक्ति को सर्वोपरि मानते हैं। उनका मानना था कि अगर भक्ति है तो तीर्थ-व्रत की जरूरत नहीं, अगर भक्ति नहीं है तो तीर्थ-व्रत व्यर्थ है। इसी प्रकार आगे कहते हैं कि भगवान की दृष्टि में समाज जाति-पाति, कुल-शील, ऊँच नीच, गरीबी-अमीरी आदि कोई चीज नहीं है, इस लोक में सभी बराबर हैं। इसका स्वस्मय इसके भक्तिकाव्य में सहज ही दिखाई देता है-

'रामभक्ता बन्नाल निज बानी।
जाति गौत कुल नाम गनत नहि रक हाथ के बानी॥
काहु के कुल नाहि विचारत॥
अनत सहाय सूर के प्रभु भक्ता के हेतु पुनि आवत॥'^{१३}

सूरदास ने अपने समाज में व्याप्त छुआछूत की भावना पर भी अपनी दृष्टि डाली है। इस पर इनका गहरा प्रतिरोध है। उन्होंने देखा कि समाज निम्न वर्गों द्वारा पैदा किये गये अन्न-सामग्री एवं राज्य पदार्थों, बनाये गये बरतन एवं पल्लव, गुन गये कपड़ा चमड़ के बनाये जुती आदि चीजों में छुआछूत का परहज नहीं है, लेकिन बनाने वाले से प्रभावित उसके शरीर से है। इसी प्रकार निम्न जाति के द्वारा इत्ये जाति वाली भाजन पकाना छूत नहीं है लेकिन पकाने वाले से है। समाज की यह स्थिति बिल्कुल विगर्हनीय है।

सूरदास को ब्रज भूमि में विशेष प्रेम है। उस भूमि के सूर्य के समस्त तन्त्र साधारण के समस्त मुख्य मुख्य प्रतीत होते हैं। वहाँ का वजीवट, चारों की यमुना, वहाँ के वन और जंगल वहाँ के साथ गापियों का विहार, वहाँ का रास और लता एक तरफ़ कुँआ से अलख का आनन्द आदि के वर्णन हमारे जीवन के प्रकृति प्रेम को तरसाता है। जैसे

'कहीं मुख ब्रज को सौ संसार।
कहीं मुखद बरीषवट, जगुनी, सह मन दादा विचार।
कहीं बन घाम, कहीं राता योग, कहीं सम ब्रज नाम।
कहीं रस रास दीप अवतार मुख, कहीं नारि वन नाम।
कहीं लता तरु नर प्रीति अलख, कुँआ कुँआ बर नाम॥

कही बिरहं सुख बिनु गोपिन सँग सूर श्याम मम काम।।¹⁵

कुल मिलाकर सूरदास का प्रकृति के प्रति सुन्दर नाता है। इसी कारण इनका कृष्ण लीला माध्यम राष्ट्रीय सुन्दर और कालजयी है।

सूरदास भारतीय समाज की संस्कृति से भलीभांति परिचित है, जिसका रूप कृष्णभक्ति के माध्यम से इनकी रचनाओं में सहज ही दिखाई पड़ता है। माता-पिता के हृदय में जैसा प्रेम तथा वैसा आज भी ज्यों का त्यों विद्यमान है। इस स्नेह के लिए धन की, पद की एवं स्थिति आदि की अपेक्षा नहीं। चाहे माता पिछारिणी हो या पिता भजदूरी करता हो, परन्तु इससे क्या! अपनी मौली-माली और अबोध संतान के लिए निर्धन माता-पिता के हृदय में वैसा ही स्नेह का स्रोत प्रवाहित रहता है जैसा किसी राजा-रानी के हृदय में अपने राजकुमार के प्रति। माता-पिता का अपनी संतान के प्रति जो स्नेह और संस्कार होता है, वह सूर के काव्य में कृष्ण के माध्यम से देखा जा सकता है।

सूरसागर के दशम स्कन्ध में सूरदास कहते हैं कि जब ब्रजवासियों को यह पता चलता है कि नंद-यशोदा के यहाँ पुत्र हुआ है, तो ब्रज में जन्मोत्सव का आनन्द छा जाता है। समस्त ब्रज में मंगलचार होने लगते हैं, बेधावे बजने लगते हैं और नंदजी पुत्र प्राप्ति की खुशी से दान देने लगते हैं। इस खुशी के अवसर पर ब्रज के सभी स्त्री-पुरुष अपना दैनिक कार्य छोड़कर उत्सव मनाने लगते हैं—

आज बन कोऊवै जनि जाइ।

ढोटा है रे भयौ महिर कै, कहत सुनाइ-सुनाइ।

सबहिं घोष मैं भयौ कोलाहल आनन्द उर न समाइ।।¹⁶

वल्लभाचार्य की 'पुष्टिमार्गीय' साधना का अनुकरण करते हुए सूरदास ने भगवत भक्ति के माध्यम से समाज में व्याप्त जाति-पाँति की निस्सारता को गहरे स्तर से प्रभावित किया है। इस संदर्भ में बल देकर वे कहते हैं कि—

जाति-पाँति कोउ पूछत नाही, श्रीपतिकै दरबार।

श्रीभागवत सुनै जो हित करि, तरे सु भव-जल पार।

सूर, सुमिरि सो रति निसि-बासर, राम-नाम निज सार।।¹⁷

सूरदास की भक्ति भावना और भारतीय समाज की पहचान करने के लिए उस युग के सामाजिक संदर्भों की पड़ताल आवश्यक है। वे अपने युगीन समाज के निराशापूर्ण वातावरण को आशा में बदलने के लिए वात्सल्य और माधुर्य भाव से युक्त भक्तिकाव्य का प्रणयन करते हैं। इन्होंने मनुष्यता के सौन्दर्य एवं माधुर्यपूर्ण पक्ष को दिखाकर मानव जीवन के प्रति अनुराग जगाकर भक्ति के सरल और स्वाभाविक मार्ग को आलोकित किया है। इस प्रकार सूरदास के भक्ति मार्ग में और भारतीय समाज में सामाजिक उत्थान का मूल आधार प्रेम ही है। वे कृष्णभक्ति से समाज को प्रेम रूपी रस्सी से बाधन का सफल प्रयास करते हैं। सही मायने सूरदास का काव्य केवल भक्ति का सागर ही नहीं, बल्कि महासागर है, जिसके प्रेम की लहरों में डूबकर मनुष्य ईश्वरत्व प्राप्त होता है।

निष्कर्ष—

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि भारतीय समाज में सूरदास का भक्ति मार्ग मानवीयता की दृष्टि से सदीपरि है। इनकी काव्य-साधना में ज्ञान, भक्ति, और कर्म का पूर्ण सामंजस्य है। इन्होंने श्रीमद्भागवतपुराण को आधार बनाकर और भक्तिमार्ग के अनुरूप कृष्ण के गोकुल, वृंदावन और मथुरा के जीवन से सम्बन्धित सम्पूर्ण कथा में भारतीय समाज, संस्कृति एवं दर्शन का प्रतिबिम्ब दिखाते हुए अनूठा प्रयास करते हैं। मातृहृदय के बालभाव और वात्सल्य से सने प्रेमपूर्ण भावों के प्रजापति सूरदास और काव्य अद्वितीय है। निश्चित रूप से सूरदास ने कृष्णभक्ति के माध्यम से भारतीय समाज की लोकसंस्कृति, संस्कार, मानवीय-मूल्य, प्रकृति-प्रेम आदि जीवन के विविध पक्षों को भक्ति मार्ग के माध्यम से सहजने का अनूठा कार्य करते हैं।

सन्दर्भ—

1. सूरदास, संपादक हरबंसलाल शर्मा राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, असारो मार्ग, दरियागंज नई दिल्ली संस्करण 2011, पृ. 259

2. सूर जी काव्य-चेतना, डॉ. बलराम तिवारी अभिव्यक्ति प्रकाशन, गोविन्दपुर, कौलानी, इलाहाबाद, संस्करण, 2001, पृ. 17
3. भक्ति आन्दोलन और सूरदास का काव्य-मैनेजर पाण्डेय, वाणी प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली संस्करण, 1997, पृ. 290
4. सूर ग्रंथावली (प्रथम खण्ड) : सूरसागर, अखिल भारतीय विक्रम परिषद, काशी, उत्तर बेनियाबाग, वाराणसी, आवृत्ति सन् 1974 ई. भूमिका, पृ. 15
5. भक्ति आन्दोलन और सूरदास का काव्य-मैनेजर पाण्डेय, वाणी प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली संस्करण, 1997, पृ. 165
6. सूर ग्रंथावली (प्रथम खण्ड) : सूरसागर, अखिल भारतीय विक्रम परिषद, काशी, उत्तर बेनियाबाग, वाराणसी, आवृत्ति सन् 1974 ई. पद-72
7. सूरदास और भ्रमरगीत सार, डॉ. किशोरी लाल, अभिव्यक्ति प्रकाशन, विश्वविद्यालय मार्ग, इलाहाबाद, संस्करण, 1993, पृ. 102
8. हिन्दी साहित्य का इतिहास, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, विजय प्रकाशन मंदिर प्रा.लि., वाराणसी, संस्करण 2014, पृ. 124-125
9. हिन्दी साहित्य का इतिहास, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, विजय प्रकाशन मंदिर प्रा.लि., वाराणसी, संस्करण 2014, पृ. 127
10. सूरसागर (सटीक), डॉ. हरदेव बाहरी, लोकभारती प्रकाशन, महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद, संस्करण, 2015, दशम स्कन्ध, पद-621
11. सूर काव्य : दृष्टि और विमर्श, संपादक, डॉ. ब्रजेश्वर वर्मा, हिन्दुस्तानी एकेडमी, कमलानेहरू मार्ग, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण : 2010, पृ. 112
12. सूर काव्य : दृष्टि और विमर्श, संपादक, डॉ. ब्रजेश्वर वर्मा, हिन्दुस्तानी एकेडमी, कमलानेहरू मार्ग, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण : 2010, पृ. 112
13. सूरदास, संपादक, हरबंसलाल शर्मा, राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, अंसारी मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण, 2011, पृ. 33
14. सूरदास, संपादक, हरबंसलाल शर्मा, राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, अंसारी मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण, 2011, पृ. 34
15. सूरदास-संपादक : हरबंसलाल शर्मा, राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, अंसारी मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण, 2011, पृ. 215
16. सूर ग्रंथावली, अखिल भारतीय विक्रम परिषद, काशी, प्रथम आवृत्ति सवत् : 2031, सूरसागर, दशम स्कन्ध, पद-14
17. सूर ग्रंथावली (चतुर्थ खण्ड) : सूरसागर, अखिल भारतीय विक्रम परिषद, काशी, वाराणसी, प्रथम आवृत्ति सन् 1978 ई. पृ. 2433